4

महासागरीय जल की भौतिक एवं रासायनिक विशेषताएँ

(The Physical and Chemical Characteristics of Ocean Water)

सौर मण्डल के अब तक ज्ञात 9 ग्रहों में पृथ्वी ही एक ऐसा विलक्षण ग्रह है जिस पर मानव निवास करता है। इसका कारण पृथ्वी का जीवनोपयोगी जल से आच्छादित होना है। पृथ्वी के 71 प्रतिशत भाग पर जल का विस्तार है और इस पर पाये जाने वाले जल का 97 प्रतिशत भाग महासागरों में पाया जाता है। इन महासागरों को जल का विशालतम भण्डार कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी। वायुमण्डल में जलवाष्प की मात्रा जल के इसी विशाल भण्डार से वाष्पन क्रिया द्वारा निरन्तर प्राप्त होती रहती है जिससे धरातल पर वर्षण (precipitation) के द्वारा जल उपलब्ध होता है। महासागरीय जल तथा स्वच्छ जल में विशेष प्रकार का अन्तर होता है जिसके फलस्वरूप एक खारेपन के कारण अपेय होता है तथा दूसरा स्वच्छ एवं पेय होने के साथ ही सम्पूर्ण जलराशि का भाग 3 प्रतिशत धरातल पर विभिन्न रूपों में उपलब्ध है।

यदि इन दोनों प्रकार के जल को एक पदार्थ के रूप में देखा जाए तो उसमें कुछ ऐसी विशेषतायें पाई जाती हैं जो किसी अन्य पदार्थ में नहीं पाई जातीं। जल ही एक मात्र ऐसा पदार्थ है जो द्रव्य, गैस तथा ठोस इन तीनों अवस्थाओं में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त, जल ही एक ऐसा प्राकृतिक अजैविक पदार्थ (inorganic substance) है जो प्रसामान्य तापमान एवं वायुदाब पर तरल अवस्था अथवा द्रव्य के रूप में पाया जाता है। जल की दूसरी सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि धरातल पर ऊष्मा के वितरण तथा जीवनोपयोगी अन्य बहुत-सी दशाओं पर इसका जितना नियन्त्रण है उतना अन्य किसी भी पदार्थ का नहीं है। अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं के लिए जल की आणविक संरचना उत्तरदायी है। यहाँ इतना ही जान लेना पर्याप्त है कि जल जैसे पदार्थ का निर्माण दो हाईड्रोजन तथा एक ऑक्सीजन परमाणुओं के सम्मिलन से हुआ है। जल के एक अणु (Molecule) में परमाणुओं (atoms) का विन्यास ही इसके भौतिक एवं रासायनिक विशेषताओं का मूल कारण है। जल की एक अन्य विशेषता इसका शक्तिशाली विलेयक (solvent) होना है। इसकी विलेयक शक्ति का कारण जल के अणुओं की ध्रुवणता क्षमता (polarizing power) है। जल के अणुओं में चुम्बक की तरह धनात्मक तथा ऋणात्मक सिरे होते हैं। इसके धनात्मक सिरे ऋणात्मक चार्ज वाले कणों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं, जबकि ऋणात्मक सिरे धनात्मक चार्ज वाले कणों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। जल का सम्पर्क जब ऐसे यौगिकों (compounds) से होता है, जिसके मूल तत्त्व (elements) परस्पर विरोधी विद्युत् आवेश के आकर्षण से परस्पर जुड़े रहते हैं, तब जल के पोलर अणु उस यौगिक के संघटक तत्त्वों को एक-दूसरे से अलग कर देते हैं। यही कारण है कि जल सरलतापूर्वक विभिन्न प्रकार के यौगिकों (compounds) को घोल रूप में बदल देता है। यह विशेषता अन्य किसी द्रव में नहीं पायी जाती है। अपनी इसी विशेषता के कारण पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिये जल परमावश्यक वस्तु है। जल का पृष्ठ तनाव (surface tension) अधिक होता है, तथा किसी अन्य द्रव की अपेक्षा इसमें ऊष्मा को अवशोषित करने की क्षमता भी अधिक होती है। जल को उसकी तीन विभिन्न अवस्थाओं यथा द्रव, गैस, ठोस में परिवर्तित करने के लिए अधिक मात्रा में ऊष्मा की आवश्यकता होती है।

अन्य किसी भी द्रव की अपेक्षा जल गर्म अथवा शीतल होने में अधिक समय लेता है। इस विशेषता के कारण धरातल के तापमान को कम करने में जल की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।

सागरीय जल तथा शुद्ध जल (Sea Water and Pure Water)

समुद्री जल खारेपन के कारण अपेय होता है, जबकि शुद्ध जल (pure water) पेय होता है। जल में घुले हुए सम्पूर्ण अकार्बनिक पदार्थों को उसकी लवणता (salinity) कहा जाता है। महासागरीय जल की लवणता उसके भार (weight) की दृष्टि से 33‰ से 37‰ के मध्य होती है। लवणता के नियन्त्रक कारक वाष्पीकरण, वर्षण तथा नदियों द्वारा बहा कर ले जाने वाला जल होता है। महासागरीय जल की औसत लवणता 35‰ मानी जाती है, यद्यपि इसमें स्थानिक तथा कालिक दोनों प्रकार के परिवर्तन होते हैं। वैज्ञानिकों की गणनानुसार विश्व के सभी महासागरों में लवण की कुल मात्रा लगभग 5.5 लाख करोड़ टन आँकी गई है। यदि महासागरों के सम्पूर्ण जल को वाष्प में परिणत होने दिया जाए, तो शेष लवण की मात्रा सम्पूर्ण धरातल को 45 मीटर ऊँची परत से आच्छादित कर लेगी। यदि 1000 किलोग्राम समुद्री जल को उबाल कर उसके जलीय अंश को वाष्प रूप में परिवर्तित कर दिया जाए तो 35 कि.ग्रा. लवण की मात्रा शेष रह जायेगी। समुद्र वैज्ञानिक इसे 35‰ के रूप में व्यक्त करते हैं। ज्ञातव्य है कि समुद्री जल को वाष्पित करने पर इसके आयन विभिन्न प्रकार से परस्पर मिल कर खाने का नमक अथवा सामान्य नमक तैयार कर देते हैं जिसे आँग्ल भाषा में Table salt (Nacl) कहा जाता है।

सारणी 4.1

महासागरीय लवणता

प्रमुख संघटक (प्रति 10 लाख पर 100 भाग से अधिक	
क्लोरीन, Cl-	59.04
सोडियम, Na^+	30.61
सल्फेट, SO_4–2	7.68
मैगनेसियम, Mg^{-2}	3.69
कैल्शियम, Ca^{+2}	1.16
पोटैशियम, K^+	1.10
	99.28
गौण संघटक	(1-100 भाग प्रति 10 लाख)
मूल तत्त्व (elements)	PPM
ब्रोमाइन (Bromine)	65.0
कार्बन (Carbon)	28.0
स्ट्रान्टियम (Strontium)	8.0
बोरान (Boron)	4.6
सिलिका (Silica)	3.6
फ्लूराइड (Fluoride)	1.0
सूक्ष्म मात्रिक तत्व	(प्रति 10 लाख में एक भाग से कम)
(Trace elements)	आयोडीन
नाइट्रोजन (Nitrogen)	लोहा
लीथियम (Lithium)	जिंक
रुबीडियम (Rubidium)	मॉलिबडेनम
फॉस्फोरस (Phosphorus)	

महासागरीय जल में पाये जाने वाले विभिन्न पदार्थों की औसत मात्रा।

उपर्युक्त सारणी 4.1 के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि समुद्र के जल में अनेक प्रकार के पदार्थ घोल रूप में मिले होते हैं।

समुद्र के खारे जल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें वायु-मण्डल तथा भूपर्पटी (Earth crust) में विद्यमान सभी मूल तत्त्व (elements) न्यूनाधिक मात्रा में पाये जाते हैं। कुछ तत्त्व का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंश मात्र ही समुद्री जल में पाया जाता है, किन्तु 14 ऐसे तत्त्व हैं जिनका संकेन्द्रण (concentration) 1 PPM से ज्यादा होता है। ऐसे तत्त्व जिनकी मात्रा 0.001% (1 part per million) से कम होती है उन्हें ट्रेस एलीमेण्ट (Trace elements) कहा जाता है। इनमें से कुछ ट्रेस एलीमेण्ट समुद्री जीवों के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण होते हैं, जबकि व्यावसायिक दृष्टि से भी कुछ बेशकीमती होते हैं। इन ऐलीमेन्ट्स में उदाहरण के लिये सोना, चाँदी तथा रेडियम जैसी महत्त्वपूर्ण धातुओं को ही लें। यद्यपि ये धातुयें समुद्र के जल में पायी जाती हैं; किन्तु जल में उनकी मात्रा इस प्रकार होती हैं–सोना 0.00b mg. चाँदी 0.3 mg. तथा रेडियम 0.000,000 3 mg. per metric ton पाया जाता है।

समुद्री जल के विपरीत नदी के जल में कैल्शियम एवं बाईकार्बोनेट आयन (bicarbonate ions) पतले घोल के रूप में विद्यमान रहते हैं, जबकि समुद्र के जल मेंमुख्य रूप से क्लोराइड (Chloride) तथा सोडियम (Sodium) के आयन पाये जाते हैं। इसी प्रकार यदि समुद्र का जल नदी के जल का ही सान्द्रिक रूप (concentrated form) होता तब उसमें मैग्नेशियम की मात्रा अवश्य ही अधिक होती। वास्तव में समुद्री जल में पृथ्वी की गहरी पर्तों में पाये जाने वाले अत्यधिक वाष्पनशील पदार्थों की अधिकता होती है, जो ज्वालामुखी के उद्‌गार अथवा भूपृष्ट में उत्पन्न दरारों से प्राप्त होते हैं। इन अत्यधिक वाष्पनशील पदार्थों की श्रेणी में निम्नॉकित पदार्थों को सम्मिलित किया जाता है; कार्बन-डाई-ऑक्साइड, क्लोरीन, गन्धक (Sulfur), हाइड्रोजन, फ्यूरीन, नेत्रजन (Nitrogen) तथा जल वाष्प आदि।

समुद्री जल में शिलाओं के अपक्षय एवं अपरदन से प्राप्त पदार्थों तथा ज्वालामुखी से निकली गैसों के सम्मिश्रण से कुछ प्रकार के लवण का निर्माण होता है। उदाहरणार्थ, खाने का नमक (common table salt) जिसे सोडियम क्लोराइड (Sodium chloride) भी कहा जाता है, शिलाओं के अपक्षय से प्राप्त सोडियम आयन तथा ज्वालामुखी प्रक्रिया से प्राप्त क्लोरीन आयन के सम्मिश्रण से निर्मित होता है।

समुद्र के जल में विविध प्रकार के ठोस पदार्थों के घुलकर मिल जाने से उसकी विशिष्ट आपेक्षिक ऊष्मा (specific heat) लगभग 4% कम हो जाती है। समुद्री जल के तापमान में 1°C वृद्धि के लिये 0.96 कैलोरी ऊष्मा की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त, घुले हुए ठोस पदार्थों के कारण समुद्र में बर्फ की जाली बनने में बाधा पड़ती है क्योंकि समुद्र के खारेपन में वृद्धि के कारण उसका हिमांक (freezing point) नीचा हो जाता है। उदाहरणार्थ 35‰ लवणता वाला समुद्री जल का हिमांक 1.91°C (28.6°F) होता है। समुद्री जल का घनत्व तापमान में कमी होने के साथ-साथ बढ़ता जाता है, किन्तु हिमाँक प्राप्त करते ही घनत्व में होने वाली वृद्धि रुक जाती है। समान दशाओं में समुद्र का जल स्वच्छ जल की अपेक्षा मंथर गति से वाष्पित होता है। फिर भी वाष्पन की गुप्त ऊष्मा (Latent heat of evaporation) दोनों के लिए समान होती है।

द्रवीभूत गैसें (Dissolved gases)

वायु में उपस्थित गैसें समुद्र की सतह पर जल में शीघ्र ही द्रवीभूत हो जाती हैं। इन द्रवीभूत गैसों की आवश्यकता समुद्री जीव-जन्तुओं तथा वनस्पतियों को अपने जीवन के लिए पड़ती है क्योंकि समुद्री जीवों में इतनी शक्ति नहीं होती कि जल के अणुओं का विघटन करके उससे ऑक्सीजन प्राप्त कर सकें। इसी प्रकार समुद्री वनस्पतियाँ भी अपने पोषण के लिए पर्याप्त कार्बन-डाई-ऑक्साइड का निर्माण नहीं कर

सकतीं। समुद्री जल में घुली हुई गैसें प्रचुरता की दृष्टि से सारणी में प्रदर्शित निम्नलिखित क्रम में पायी जाती है, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड। जल एवं वायु में इनकी घुलनशीलता में अन्तर के फलस्वरूप समुद्र में द्रवीभूत गैसों के अनुमान तथा वायुमण्डल में उन्हीं गैसों के अनुपात में बड़ी असमानता पाई जाती है। शीतल और गर्म जल में इन गैसों की घुलनशीलता की दर भिन्न-भिन्न होती हैं। समान मात्रा वाले गर्म जल की अपेक्षा ध्रुवीय ऊष्मा कटिबन्धीय शीतल जल में द्रवीभूत गैस की मात्रा अधिक होती है। ज्ञातव्य है कि ठोस पदार्थों के विपरीत, गैस शीतल जल में अधिक शीघ्र ही द्रवीभूत (dissolved) हो जाती हैं। नाइट्रोजन, ऑक्सीजन तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड आदि गैसों की समुद्री जल में विलेयता का विस्तृत विवरण सारणी 4.2 में यहाँ प्रस्तुत किया गया है –

सारणी 4.2

वायुमण्डल तथा महासागर में प्रमुख गैसें

गैस	आयतन की दृष्टि से वायुमण्डलीय गैस का प्रतिशत	समुद्री जल में धुली हुई गैस का प्रतिशत (आयतन की दृष्टि से)	समुद्री जल में गैस का संकेन्द्रण (भार की दृष्टि से)
नाइट्रोजन (N_2)	78.08%	48%	10–18 PPM
आक्सीजन (O_2)	20.95%	36%	0–13 PPM
कार्बन डाई ऑक्साइड (Co_2)	0.035%	15%	64–107 PPM

स्रोत : Hill, The Sea; Composition of Sea water 1963.

नाइट्रोजन (Nitrogen)

समुद्र के जल में घोल रूप में विद्यमान गैसों में 49 प्रतिशत नाइट्रोजन होता है, जबकि वायुमण्डल में आयतन की दृष्टि से 78% से कुछ अधिक नाइट्रोजन होता है। समुद्र के जल की ऊपरी पर्तों में नाइट्रोजन का बाहुल्य होता है। दूसरे शब्दों में ऊपरी परतें नाइट्रोजन से संतृप्त होने के कारण नाइट्रोजन की अतिरिक्त मात्रा द्रवीभूत नहीं हो सकती। समुद्री जीवों को प्रोटीन तथा अन्य जैव रसायनों के निर्माण हेतु नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। किन्तु वायुमण्डल तथा महासागर में उपस्थित नाइट्रोजन का उपयोग जीवों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता। इस गैस का उपयोग उन जीवों के विशिष्ट अवयवों (specialized organisms) द्वारा इस गैस के रासायनिक रूप में किया जाता है। सागर के नितल पर पाये जाने वाले विशेष प्रकार के बैक्टीरिया जल में घुले हुए नाइट्रोजन से उपयोग में लाये जाने वाले नाइट्रेट का निर्माण करके उन्हें प्रयोग करते हैं। जीव स्वयं उनका पुनः चक्रण (recycling) करके ही उनका उपयोग करते हैं।

ऑक्सीजन (Oxygen)

महासागर के जल में घुली हुई गैसों में 36% ऑक्सीजन होता है। ज्ञातव्य है कि इस घुली हुई ऑक्सीजन की सौगुनी मात्रा वायुमण्डल में गैस के रूप में पाई जाती है। वैज्ञानिकों की गणनानुसार एक लीटर समुद्री जल में 6 मिलीग्राम ऑकसींजन घोल रूप में पाया जाता है। ऑक्सीजन की इतनी सूक्ष्म मात्रा भी उन समुद्री जीवों के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है जो अपने ग्रिल (Grill) के द्वारा ऑक्सीजन प्राप्त करते हैं। महासागरों में द्रवीभूत ऑक्सीजन का मुख्य प्रकाश-संश्लेषण करने वाली समुद्रीवनस्पतियाँ होती हैं। चूँकि प्रकाश-संलेषण के लिये सूर्य की रोशनी की आवश्यकता होती है, अतः समुद्री जीवों के लिए उपलब्ध ऑक्सीजन का अधिकाँश भाग महासागर की सतह के निकट होता है। क्योंकि समुद्री वनस्पतियाँ इतनी

अधिक मात्रा में पायी जाती हैं तथा प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया में इतनी सक्रिय होती हैं कि फ्री ऑक्सीजन की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा समुद्रों से वायुमण्डल की ओर विसर्गित (diffused) होती हैं जो वायुमण्डल से प्राप्त होने वाले ऑक्सीजन से परिमाण में कई गुना अधिक होती हैं।

कार्बन-डाई-ऑक्साइ (Carbon-di-oxide)

वायुमण्डल में कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) की मात्रा बहुत कम है। जहाँ वायुमण्डल में नाइट्रोजन 78% तथा ऑक्सीजन 21% पाया जाता है, वहीं कार्बन-डाई-ऑक्साइ की मात्रा मात्र 0.03% है। इसका मुख्य कारण पादप जगत में इसकी बहुत अधिक माँग है, क्योंकि विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ, जो प्रकाश-संश्लेषण द्वारा अपना भोजन तैयार करती हैं, इस कार्य को सम्पादित करने के लिये उन्हें कार्बन-डाई-ऑक्साइड की आवश्यकता होती है। सूर्य से प्राप्त प्रकाश में इस गैस की सहायता से भोजन पकाकर पौधे अपना विकास करते हैं। इन पौधों से वायुमण्डल को ऑक्सीजन प्राप्त होता है। पौधों के विकास के लिये इन्हें कार्बन की आवश्यकता पड़ती है जिसकी आपूर्ति कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस से होती है।

यह गैस जल में अत्यधिक घुलनशील होती है। फिर भी समुद्री जल में घुली हुई सभी गैसों का 15% ही इस (CO_2) का योगदान होता है। स्मरण रहे कि कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) जल के साथ रासायनिक दृष्टि से मिलकर कार्बोनिक एसिड ($H2CO_3$) का निर्माण करता है जो एक प्रकार का निर्बल तेजाब होता है। जल अपने संतृप्त होने की दशा में नाइट्रोजन अथवा ऑक्सीजन से हजारों गुना अधिक कार्बन-डाई-ऑक्साइड ग्रहण कर सकता है। महासागरीय जल की ऊपरी पर्तों में पादप्लवकों (Phyto-planktons) का बाहुल्य होता है जो कार्बन-डाई-ऑक्साइड का अति शीघ्र उपभोग कर लेते हैं। यही कारण है कि समुद्र के जल में घुली हुयी इस गैस की मात्रा सदैव उसके सैद्धान्तिक अधिकतम मात्रा से कम ही रहती है।

आज वस्तुस्थिति यह है कि वायुमण्डल की अपेक्षा महासागरों में कार्बन-डाई-ऑक्साइड की घुली हुई मात्रा लगभग साठ गुनी अधिक है। जैसा कि इससे पूर्व बताया जा चुका है CO_2 की जो मात्रा महासागरों से वायुमण्डल की ओर स्थानान्तरित होती है वह वायुमण्डल से महासागरों की ओर स्थानान्तरित मात्रा से काफी अधिक होती है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) जैसी ग्रीन हाउस गैस को अपने भीतर घोल करके रखने से विश्व के तापमान वृद्धि को कम करने में महासागरों की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए महासागरीय जल को प्रदूषित होने से सुरक्षित रखने हेतु हम सभी को प्रयास करते रहना होगा।

महासागरों में घुलनशील गैसों का ऊर्ध्वाधर वितरण
(Vertical distribution of dissolvable gases in the Oceans)

चित्र सं. 4.1 देखने से स्पष्ट हो जाता है कि ऑक्सीजन तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड के ऊर्ध्वाधर वितरण पर जल की गहराई का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। महासागरों की सतह पर अनेक प्रकार की वनस्पतियों (Photo planktons) का जो प्रकाश-संश्लेषण (Photosynthesis) द्वारा अपना भोजन तैयार करती हैं, बाहुल्य रहता है। इनके द्वारा ऑक्सीजन छोड़े जाने से महासागरों अथवा समुद्रों की प्रकाशित परतों में इस गैस की प्रचुरता होती है। किन्तु इस प्रकाशित परत के नीचे प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया के अभाव तथा समुद्री जीवों द्वारा श्वसन क्रिया हेतु ऑक्सीजन की खपत के फलस्वरूप इसकी मात्रा नीचे की ओर क्रमशः घटती जाती है। इसके अतिरिक्त मृत समुद्री जीवों के क्रमशः नीचे की ओर स्थानान्तरित होने तथा उनके सड़न-गलन में ऑक्सीजन की खपत के कारण भी इस गैस की मात्रा कम हो जाती है। किन्तु अधिक गहराई पर प्रकाश एवं पोषक तत्त्वों के अभाव में समुद्री जीवों की कमी के कारण उनके श्वसन में ऑक्सीजन की कम खपत तथा ऊपरी परतों से ऑक्सीजन से भरपूर ध्रुवीय शीतल जल के निमग्न होते रहने से इस गैस

की मात्रा में थोड़ी वृद्धि पायी जाती है। ठीक इसके विपरीत, वनस्पतियाँ प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया में कार्बन-डाई-ऑक्साइड का प्रयोग करती हैं, अतः समुद्र की ऊपरी परतों में कार्बन-डाई-ऑक्साइड की मात्रा अपेक्षाकृत कम रहती है। समुद्रों की अन्धकारमय परतों में वनस्पतियों द्वारा प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया मन्द पड़ जाने एवं CO_2 की खपत नगण्य होने के कारण इस गैस की मात्रा जल में पुनः बढ़ जाती है। CO_2 की मात्रा में वृद्धि का एक अन्य कारण समुद्र की गहराई में वृद्धि के फलस्वरूप कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस की घुलनशीलता में भी वृद्धि होती है।

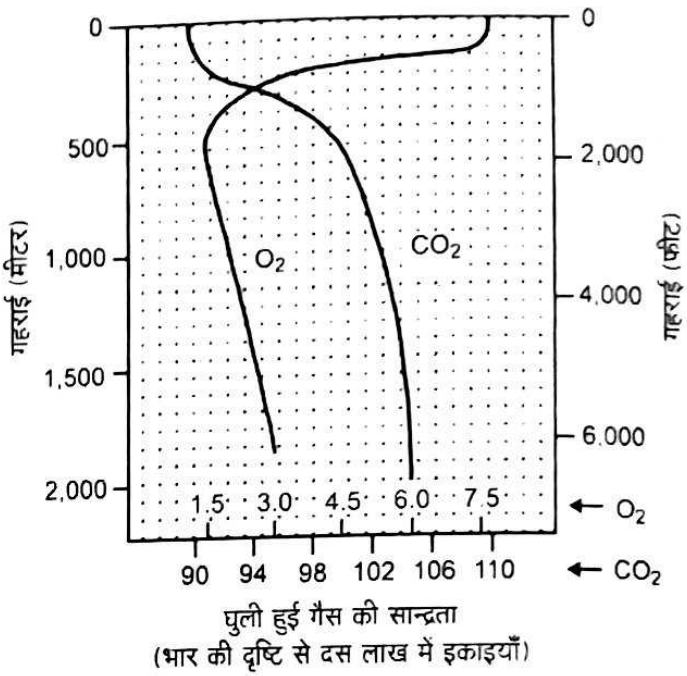

चित्र 4.1 ऑक्सीजन एवं कार्बन डाईआक्साइड की विभिन्न गहराइयों पर सान्द्रता।

अम्ल क्षारक साम्यावस्था (Acid-Base Equilibrium)

मीठे जल में हाइड्रोजन आयन (H^+) तथा हाइड्रॉक्साइड आयन (OH^-) समान मात्रा में संकेन्द्रित होते हैं। आयनों के अनुपात में किसी प्रकार का असन्तुलन अम्लीय (acidic) अथवा क्षारीय (alkalic) घोल उत्पन्न करता है। किसी घोल का क्षारीय अथवा अम्लीय होना हाइड्रोजन आयनों के संकेन्द्रण पर निर्भर करता है। इसका मापन PH स्केल पर किया जाता है। यदि किसी घोल में हाइड्रोजन आयनों (H^+) की अधिकता होती है तब ऐसी स्थिति में वह अम्लीय होता है। इसके विपरीत हाइड्रॉक्साइड आयनों (OH^-) का आधिक्य घोल को क्षारीय बना देता है। यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि PH स्केल लागरिथमिक होता है। एक PH इकाई का परिवर्तन हाइड्रोजन आयन के संकेन्द्रण में दस गुना परिवर्तन प्रदर्शित करता है। PH स्केल पर 7 इकाई न्यूट्रल अर्थात् न तो अम्लीय, नहीं क्षारीय गुण प्रदर्शित करता है।

शुद्ध जल (pure water) को इस स्केल पर 7 अंक से प्रदर्शित किया जाता है, जो अम्लीय अथवा क्षारीय दोनों में से एक भी नहीं है अर्थात् उदासीन द्रव है। ज्ञातव्य है कि 7 से नीचे के अंक अधिक अम्लीयता के सूचक हैं, जबकि 7 से अधिक अंक क्षारीयता की वृद्धि को प्रदर्शित करते हैं।

समुद्री जल का औसत PH 7.8 होने से वह हल्का क्षारीय माना जाता है, किन्तु ऐसा होना अस्वाभाविक लगता है, क्योंकि समुद्रों में कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) की भारी मात्रा घुली रहती है। जैसा कि इसके पूर्व उल्लेख किया गया है कि CO_2 जल के साथ मिलकर कार्बोनिक एसिड बनाता है तो फिर समुद्री जल अम्लीय न होकर क्षारीय क्यों है? वस्तुतः जल में घुलने पर CO_2 अनेक रूपों में परिवर्तित हो जाता है।

समुद्र का जल थोड़ा क्षारीय होने पर भी इसमें कई प्रकार के परिवर्तन होते हैं। समुद्री क्षेत्रों में जहाँ वनस्पतियों का तीव्र गति से विकास होता है, PH में वृद्धि अंकित की जाती है क्योंकि CO_2 का प्रकाश-संश्लेषण के लिए वनस्पतियों द्वारा किया जाता है। सागर-तल पर तापमान अपेक्षाकृत अधिक होने के कारण कार्बन-डाई-ऑक्साइड की कम मात्रा जल में घुल जाती है। इस प्रकार सतह के ऊष्ण और उर्वर जल का PH लगभग 8.5 होता है।

समुद्र की मध्यम गहराइयों तथा अधिक गहराई में CO_2 अधिक मात्रा में पाई जाती है जिसका मूल स्त्रोत बैक्टीरिया तथा पशुओं की श्वसन क्रिया होती है। इन गहराइयों में जल का कम तापमान, अधिक

दबाव, प्रकाश-संश्लेषण करने वाले पादपों का अभाव आदि के सम्मिलित प्रभाव से समुद्र के जल का PH कम हो जाता है जिसके फलस्वरूप गहराई में वृद्धि के साथ उसकी अम्लीयता में भी वृद्धि अंकित की जाती है। यही कारण है कि 4500 मीटर से अधिक गहराई पर समुद्र के अत्यधिक शीतल जल में कैल्शियम कार्बोनेट युक्त निक्षेप बहुत कम मिलते हैं।

रासायनिक साम्यावस्था तथा समुद्री जल के संघटकों का निवास काल (Chemical Equilibrium and Residence Time of Components of Sea Water)

यदि मान लिया जाए कि गैस-निष्क्रमण (Outgassing) तथा शैलों का रासायनिक अपक्षय एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिससे महासागरों के जल में लवण की आपूर्ति होती रहती है, तब ऐसी स्थिति में पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी महासागर समय के साथ क्रमशः अधिकाधिक खारे होते जायेंगे। ऐसा होना स्वाभाविक भी होता। किन्तु वास्तविकता इससे बिल्कुल भिन्न है। हमें विदित है कि महाद्वीपों के भीतरी भागों में स्थल से घिरी हुई झीलें अथवा सागर (अरल सागर, कैस्पियन सागर अथवा मृतक सागर आदि) क्रमशः आयु में वृद्धि के साथ अधिक खारे होते जाते हैं; जबकि विश्व का कोई भी महासागर खारे पन में वृद्धि नहीं करता। उनके खारे पन की मात्रा में स्थानिक भेद हो सकते हैं, किनतु उसमें निरन्तर वृद्धि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस प्रकार सभी महासागर अपना रासायनिक संतुलन सदैव बनाये रखते है। हम कह सकते हैं कि महासागर अपनी रासायनिक साम्यावस्था (Chemical Equilibrium) में ही बने रहते हैं। दूसरे शब्दों में, महासागरों के प्रति इकाई आयतन में पाये जाने वाले लवण का अनुपात तथा उसकी मात्रा लगभग स्थिर (अपरिवर्तनीय) बनी रहती है। लवण की जितनी मात्रा प्राप्त होती है उतनी जल से बाहर भी निकल जानी चाहिए।

भूगर्भशास्त्रियों ने बीसवीं सदी के पाँचवें दशक में महासागरों के सम्बन्ध में स्थायी अवस्था (Steady state) की परिकल्पना उपर्युक्त दृष्टि से प्रस्तुत की। स्थायी अवस्था से तात्पर्य यह है कि महासागरों में जितने आयन (परमाणु) महासागरों में जिस दर से प्राप्त होते हैं उसी दर से उनका निष्कासन भी होता रहता है। इस सिद्धान्त से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि महासागरों के खारेपन में वृद्धि नहीं हो रही है। इसी सिद्धान्त पर आधारित निवास काल (Residence time) का सिद्धान्त है जिसके द्वारा किसी मूल तत्व (Element) की समुद्री जल में औसत उपस्थिति का पता लगता है। निवास काल को निम्नलिखित सूत्र के द्वारा ज्ञात किया जाता है :

निवास काल (Residence time) = महासागर में मूल तत्व की कुल मात्रा (Amount of element in the ocean) / वह दर जिससे तत्व महासागर में जुड़ता अथवा निकलता है (Rate of which the element is added to (or removed from) the ocean)

ज्ञातव्य है कि किसी तत्व जैसे लवण का पृथ्वी के मैन्टिल (Mantle) अथवा शैलों के अपक्षय से प्राप्त होना तथा महासागर के जल में घुल जाना उस विशेष खनिज की उस मात्रा के बराबर होता है जो समुद्र के तलछट में समाहित हो जाता है। घुले हुए लवण जल से बाहर अवक्षेपित (Precipitate) हो जाते हैं तथा जीवित समुद्री प्राणियों के वे कठोर भाग जिन में सिलिकान तथा कैल्सियम कार्बोनेट रहता है क्रमशः समुद्र की तली में निक्षेपित हो जाते हैं। कालान्तर में इन तलछटों का कुछ भाग महासागर से अलग हटकर भूपृष्टीय प्लेटों के चक्रमण (Cycling) के द्वारा सबडक्शन जोन (Subduction zone) में पृथ्वी के मैन्टिल (Mantle) में खिंचकर मिल जाते हैं। गैस निष्क्रमण (Outgassing) तथा धरातल पर प्रवाहित होने वाले जल से घोल रूप में प्राप्त पदार्थ मात्रा में तलछट में समाहित घोल के बराबर होता है।

किसी मूल तत्व (Element) का निवास काल (Residence time) उसकी रासायनिक क्रियाओं पर

निर्भर करता है। कुछ तत्व ऐसे होते हैं जैसे एल्युमिनियम तथा लौह जिनके अणु (Atoms) अथवा आयन (Ions) तलछट में मिल जाने से पूर्व समुद्र के जल में अपेक्षाकृत थोड़े समय तक ही रहते हैं। इसके विपरीत क्लोराइड, सोडियम तथा मैगनेशियम समुद्र के जल में लाखों वर्षों तक पड़े रहते हैं। सारणी में समुद्री जल के प्रमुख संघटकों के निवास काल को वर्षों में प्रदर्शित किया गया है। ज्ञातव्य है कि वाष्पन तथा वर्षण (Precipitation) की क्रियाओं के फलस्वरूप महासागर में जल का निवास काल (Residence time) वैज्ञानिकों के द्वारा 4,000 वर्षों से भी अधिक आकलित किया गया है। (सारणी 4.3)

मिश्रण-काल (Mixing time) समुद्र के जल में यदि उसके संघटक खनिजों को जल के मिश्रण काल से कम दर पर मिलाया जाए तो उन खनिजों को समुद्र में समान रूप से वितरित होने का पर्याप्त समय मिल जाता है। समुद्री धाराओं तथा लहरों की तीव्र हलचलों के फलस्वरूप महासागरों का मिश्रण काल लगभग 1600 वर्ष बताया जाता है। इस प्रकार महासागरों में मिश्रण की क्रिया उनकी उत्पत्ति से लेकर आज तक हजारों-लाखों बार हो चुकी होगी।

सारणी 4.3

संघटक (Constituent)	निवास काल (वर्षों में)
क्लोराइड (Chloride) : Cl	100,000,000
सोडियम (Na^+)	68,000,000
मैगनेशियम (Mg^{2+})	13,000,000
पोटैशियम (K^+)	12,000,000
सल्फेट (SO_4^{2-})	11,000,000
कैल्शियम (Ca^{2+})	1,000,000
कार्बोनेट (CO_3^{2-})	110,000
सिलिकान (SC)	20,000
जल (H_2O)	4,100
मैगनीज (Mn)	1,300
एल्युमिनियम (Al)	600
लौह (Fe)	200

महासागर में प्रकाश (Light in the Ocean)

सूर्य-प्रकाश को महासागर के जल में प्रवेश करते समय अनेक बाधाओं का साना करना पड़ता है। इन सभी बाधाओं का यहाँ संक्षेप में उल्लेख करते हुए उनकी व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। सर्वप्रथम प्रकाश की किरणों को महासागर की सतह तक पहुँचने तथा जल में प्रवेश करने से पहले वायुमण्डल में तैरते हुए मेघ तथा स्वयं समुद्र की सतह का सामना करना पड़ता है जो सम्मिलित रूप से प्रकाश का परावर्तन (reflect) करते हैं। इस प्रकार ये दोनों प्रकाश की किरणों के लिए परावर्ती अवरोध का कार्य करते हैं, इसके अतिरिक्त वायुमण्डल की गैसें तथा अनेक धूलकण प्रकाश का अवशोषण तथा प्रकीर्णन (absorption and scattering) करते हैं। सागर की सतह को भेद कर आगे बढ़ने पर प्रकाश की किरणों को प्रकीर्णन तथा अवशोषण का सामना करना पड़ता है, जिससे वे निर्बल हो जाती हैं।

प्रकीर्णन (Scattering) प्रकाश की तरंगों के उच्छचन (bouncing) तथा प्रकीर्णन को कहते हैं जबकि

वे (तरंगें) जल या वायु में उपस्थित कणों से टकराती हैं। प्रकीर्णन की मात्रा अथवा उसका परिमाण कणों की संख्या, आकार, और संघटक पर निर्भर करती है। अवशोषण के पूर्व विभिन्न आकार-प्रकार के कणों से टकराहट के फलस्वरूप प्रकाश का प्रकीर्णन होता है। ज्ञातव्य है कि वायु की अपेक्षा जल में इसके घनत्व तथा कणों की अधिकता के कारण प्रकीर्णन की प्रक्रिया अधिक प्रखर होती है। प्रकाश का अवशोषण (absorption of light) जल के उन अणुओं की संरचना से नियन्त्रित होता है जिससे प्रकाश की किरणों की टकराहट होती है। प्रकाश के अवशोषित होते ही कणों (molecules) में कम्पन्न पैदा हो जाता है, और प्रकाश की ऊर्जा ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है।

समुद्र के जल में उसकी स्वच्छता के बावजूद उसमें असंख्य कणों तथा अन्य पदार्थों की उपस्थिति के फलस्वरूप वह कभी भी पूर्णरूप से पारदर्शी नहीं होता। इसीलिये सूर्य की किरणें सागर के तली तक प्रवेश नहीं कर पातीं। समुद्र की सतह का वह सँकरा भाग जो सूर्य-प्रकाश से प्रकाशित रहता है उसे Photic zone (photos = light) अर्थात् प्रकाशी क्षेत्र कहा जात है। उष्ण कटिबन्ध में स्थित समुद्रों में जिनका जल स्वछ होता है प्रकाशी क्षेत्र 200 मीटर तक की गहराई तक फैला रहता है। किन्तु खुले महासागरों में प्रकाशी क्षेत्र का विस्तार 100 मीटर तक ही माना जाता है। इसी संकरे, तथा गर्म सतही क्षेत्र में प्रकाश-संश्लेषण (Photosynthesis) से भोजन बनाने वाले समुद्री पादप निवास करते हैं जिन्हें Phytoplankton कहा जाता है। पोषक तत्त्वों की उत्पादकता की दृष्टि से महासागरों का यह भाग अत्यन्त उर्वर एवं महत्त्वपूर्ण होता है। इसी भाग को सूर्य से ऊष्मा की प्राप्ति होती है, महासागर के इसी भाग से ऊष्मा वायुमण्डल में स्थानान्तरित होता है तथा वायु और महासागर के मध्य गैसों का आदान-प्रदान भी होता है। इसी संकरी पेटी में महासागरों का उष्मा स्थैतिक प्रभाव (thermostatic effects) क्रियाशील रहता है। वास्तव में, किसी समुद्र के जीवधारी प्राणी मुख्यतः इसी प्रकाशित क्षेत्र में पाये जाते हैं। प्रकाशी क्षेत्र जितना पतला है, उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

अप्रकाशी क्षेत्र (Aphotic zone)–महासागरों के प्रकाशी क्षेत्र के नीचे अप्रकाशी क्षेत्र होता है जहाँ सूर्य की किरणों का प्रवेश नहीं होने से अन्धकार रहता है। इस क्षेत्र को अप्रकाशी क्षेत्र (aphotic zone a = without + photos = light) कहा जाता है। इस क्षेत्र में पाये जाने वाले समुद्री जीवों से थोड़ी रोशनी पैदा हो जाया करती है।

कुछ विशेष रंगों वाली प्रकाश ऊर्जा सतह के निकट ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है। स्मरण रहे कि मात्र 1 मीटर की गहराई में प्रवेश करने के पश्चात् 45% प्रकाश ऊर्जा शेष रह जाती है जो मुख्य रूप से हरे और नीले तरंग दैर्ध्य में होती है।

10 मीटर के उपरान्त 85% प्रकाश का अवशोषण हो जाता है, और 100 मीटर की गहराई के पश्चात् प्रकाश का केवल 10% भाग ही शेष रह जाता है। गहराई में वृद्धि के साथ-साथ प्रकाश मन्द होता जाता है और उसका रंग नीला से और अधिक नीला हो जाता है। इसका कारण लाल, पीला और नारंगी तरंग-दैर्ध्य (wave-longths) का पहले ही अवशोषण हो चुका होता है। वैज्ञानिकों की गणनानुसार समुद्रों के स्वच्छतम जल में सूर्य की किरणों 250 मीटर के आगे नहीं प्रवेश कर पातीं।

ऐसा अनुभव किया जाता है कि ऊपर से देखने पर समुद्र का स्वच्छ जल नीला दिखाई पड़ता है, क्योंकि हाइड्रोजन बॉण्ड के द्वारा लाल रंग के अवशोषण (absorption) के पश्चात् शेष बचा हुआ नीला रंग सतह से प्रकीर्णन (scattering) हो जाने से हमें दिखायी पड़ता है। गोताखोरों को सतह के निकट नीला रंग अधिक चटकीला दिखाई पड़ता है क्योंकि लाल रंग पूर्ण रूप से समुद्र-जल के पहले कुछ मीटर गहराई में ऊष्मा में परिवर्तित हो जाता है। 10 मीटर की गहराई पर यदि किसी गोताखोर का हाथ कट जाए तो उससे निकलने वाले खून का रंग लाल के बजाय भूरा (grey) दिखाई पड़ेगा क्योंकि उस गहराई पर लाल रोशनी इतनी नहीं होती कि खून का रंग परावर्तित होकर उसके नेत्रों को उत्तेजित (stimulate) कर सके।

समुद्र का जल नीला क्यों दिखाई पड़ता है?
(Why is Sea water blue?)

सूर्य प्रकाश को समुद्रतल पर पहुँचने तथा जल में प्रवेश करने में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। हमें ज्ञात है कि आकाश में उपस्थित मेघ तथा समुद्र तल से प्रकाश का परावर्तन होता है। शेष का कुछ भाग वायुमण्डल की संघटक गैसों तथा धूल कणों के द्वारा प्रकीर्णन (Scattering) तथा अवशोषण (Alsorption) की प्रक्रिया से प्रभावित होता है। इस प्रकार समुद्रतल पर पहुँचने से पूर्व प्रकाश में आंशिक रूप से कमी हो जाना स्वाभाविक होता है। वायु तथा जल के अणुओं के मध्य उछाल के कारण प्रकाश का प्रकीर्णन होता है, इस प्रक्रिया में वायुमण्डल में उपस्थित विभिन्न आकार के ठोस कणों, जल की बूँदों का भी योगदान होता है। ज्ञातव्य है कि स्थल की अपेक्षा जल का घनत्व अधिक होने तथा उसमें उपस्थित कणों तथा घुले हुए पदार्थों के फलस्वरूप जल में प्रकीर्णन अधिक होता है। प्रकाश के अवशोषण की क्रिया जल के उन अणुओं (Molecules) की संरचना से नियंत्रित होती है जिनसे प्रकाश की टकराहट होती है। यहाँ यह जान लेना आवश्यक हो जाता है कि जब प्रकाश का अवशोषण होता है, अणुओं में कम्पन उत्पन्न होता है और प्रकाश की ऊर्जा ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है।

समुद्र का जल पूर्णरूप से स्वच्छ होने पर भी पूर्ण पारदर्शी (Perfectly transparent) नहीं होता। क्योंकि यदि ऐसी स्थिति होती, तब सूर्य की किरणों समुद्र जल में गहराई वाला भाग भी प्रकाशित होता जिसके फलस्वरूप गर्म समुद्री बेसिनों में वनस्पतियों की अधिकता होती। किन्तु ऊपर वर्णित विभिन्न अवरोधों के कारण समुद्र की ऊपरी सतह का कुछ ही भाग प्रकाशित हो पाता है जिसे **प्रकाशी क्षेत्र** (Photic zone) कहा जाता है। इस क्षेत्र की गहराई बहुत कम होने के बावजूद इस का भौगोलिक दृष्टि से बहुत अधिक महत्व है।

समुद्र के प्रकाशी क्षेत्र के नीचे प्रकाश के अभाव में अन्धकार छाया रहता है, किन्तु कुछ विशेष प्रकार के समुद्री जीवों द्वारा थोड़े प्रकाश को देखा जा सकता है। इस अन्धकारमय क्षेत्र को **अप्रकाशी क्षेत्र** (Aphotic zone) कहा जाता है।

समुद्री जल के नीला दिखाई पड़ने का वास्तविक कारण

विभिन्न रंगों से उत्पन्न प्रकाश ऊर्जा का ऊष्मा में परिवर्तित होने की प्रक्रिया में अन्तर ही जल के नीला दिखाई पड़ने का एक प्रमुख कारण है। वास्तव में सौर वर्णक्रम (Solar spectrum) के कुछ संघटक रंगों की प्रकाश ऊर्जा समुद्र की सतह के अधिक निकट ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है, जब कि दूसरे रंगों की प्रकाश ऊर्जा को ऊष्मा में बदलने में अधिक दूरी तय करनी पड़ती है। इस अन्तर का मूल कारण सौर वर्णक्रम के संघटक रंगों का अन्तरात्मक अवशोषण (Differential absorption) है। समुद्र के जल में एक मीटर की दूरी (गहराई) पार करने पर प्रकाश ऊर्जा (Light energy) का 45% शेष रह जाता है जिसका अधिकांश भाग हरे और नीले तंरगदैर्ध्य में होता है। इसके आगे 10 मीटर पर प्रकाश का 85% भाग अवशोषित हो जाता है, जबकि 100 मीटर की गहराई पर प्रकाश का मात्र 1% शेष रह जाता है। गहराई में वृद्धि होने के साथ-साथ प्रकाश मंद होता जाता है और उसमें नीलापन उत्पन्न हो जाता है। इसका प्रमुख कारण लाल, पीला और नांरगी रंगों का पहले ही हो चुका अवशोषण माना जाता है। समुद्र जल चाहे जितना भी स्वच्छ हो, सूर्य प्रकाश जल के भीतर 250 मीटर से अधिक गहराई को केवल विशेष परिस्थितियों में ही पार कर सकता है।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि समुद्र अथवा महासागरों का स्वच्छ जल इसलिये हमें नीला दिखाई पड़ता है कि जल में नीला प्रकाश (Blue light) काफी दूर तक प्रवेश करने के कारण सतह से प्रकीर्णित (Scattered) होकर हमारी आँखों तक पहुँचता है। समुद्र की सतह से कम गहराई पर गोता लगाने वालों को नीला रंग और चटकीला दिखाई पड़ता है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सतह

के निकट हाईड्रोजन बान्डों के द्वारा लाल रंग से उत्पन्न प्रकाश के अवशोषण के कारण शेष बचे हुए नीले रंग के प्रकीर्णन के फलस्वरूप हमें जो कुछ दिखाई पड़ता है वह नीला रंग होता है।

महासागर में ध्वनि संचार (Transmission of Sound in the Ocean)

ध्वनि संचार के लिये वायु की अपेक्षा जल अधिक उत्तम माध्यम सिद्ध हुआ है। महासागर में ध्वनि की गति लगभग 1500 मीटर प्रति सेकेण्ड मापी गई है। इसके विपरीत शुष्क वायुमण्डल में जिसका तापमान 20°C होता है ध्वनि-प्रेषण की गति मात्र 334 मीटर प्रति सेकेण्ड होती है। महासागर के जल में ध्वनि की गति में जल के तापमान एवं वायुमण्डलीय दाब में वृद्धि के कारणवृद्धि हो जाती है। ज्ञातव्य है कि ध्वनि की गति शीतल एवं गहरे जल की अपेक्षा महासागर के उष्ण सतह के जल में अधिक होती है। महासागर की गहराई में वृद्धि के साथ-साथ ध्वनि की गति कम होती जाती है। समुद्र वैज्ञानिकों के द्वारा पता लगाया गया है कि लगभग 1 किलोमीटर की गहराई पर ध्वनि संचार की गति न्यूनतम स्तर तक पहुँच जाती है। किन्तु इससे (1000 मीटर) अधिक गहराई पर दाब में वृद्धि कम होते हुए तापमान के प्रभाव को निष्क्रिय कर देता है। तापमान की स्थिरता के फलस्वरूप ध्वनि संचार की गति में पुनः वृद्धि हो जाती है। (चित्र संख्या 4.2)

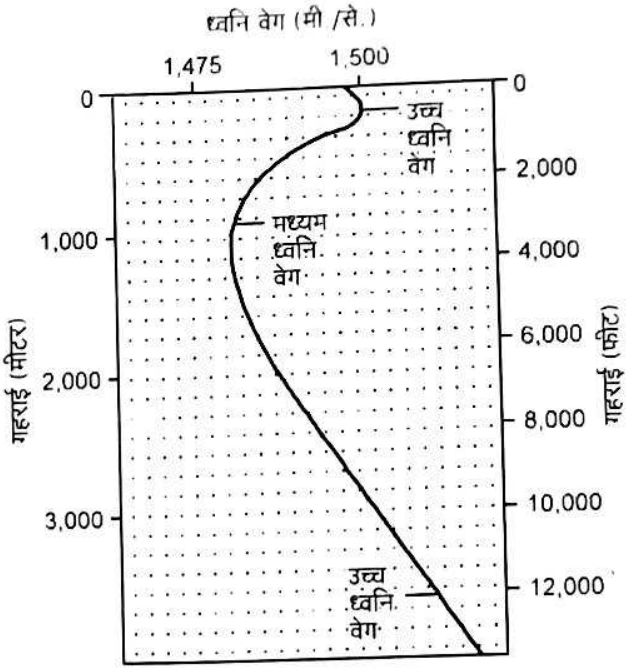

चित्र 4.2 ध्वनि वेग एवं जल की गहराई का सम्बन्ध।

सागर की तली (bottom) के निकट ध्वनि संचरण की गति उसकी सतह की अपेक्षा अधिक हो जाती है। इस प्रकार महासागरीय जल के भीतर ध्वनि संचरण (Sound transmission) की गति में उतार-चढ़ाव के बावजूद यह ध्वनि की औसत गति के 2% अथवा 3% से अधिक नहीं होती।

सोफार लेयर (Sofar Layer)

ध्वनि के संचार की गति महासागर की अन्य दशाओं पर निर्भर करती हैं, किन्तु विभिन्न महासागरों में इस परत की गहराई में अन्तर पाया जाता है। उत्तरी अटलाण्टिक महासागर में इस परत की गहराई 1200 मीटर तथा उत्तरी प्रशान्त महासागर में 600 मीटर मापी गई। इस परत में ध्वनि का वेग न्यूनतम होने के बावजूद इसमें ध्वनि का संचरण सर्वाधिक सफल (efficient) माना जाता है, क्योंकि ध्वनि-तरंगों के अपवर्तन (refraction) के फलस्वरूप ध्वनि की ऊर्जा इस परत के बाहर नहीं जाने पाती। वस्तुतः ध्वनि की तरंगें ध्वनि की निम्नतर गति की ओर मुड़कर उसी परत में सीमित रहती हैं।

इस परत को समुद्र जल की 'सोफर लेयर' (Sofar layer) कहा जाता है जिसमें ध्वनि का वेग न्यूनतम होता है। ध्वनि का संचरण सर्वश्रेष्ठ इसलिए कहा जाता है कि इस परत में ध्वनि अपेक्षाकृत अधिक दूरी तक सुनाई पड़ती है। इसका कारण ध्वनि तरंगों का अपवर्तन (refraction) है जो ध्वनि तरंगों को इसी परत में सीमित रखता है।